International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(4): 164-167

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(4): 164-167
© 2017
www.anantaajournal.com
Received: 29-05-2017
Accepted: 30-06-2017

विजय कुमार
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, जम्मू वि. वि. जम्मू

Correspondence
विजय कुमार
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, जम्मू वि. वि. जम्मू

वाल्मीकि–रामायण में रस निरूपण

विजय कुमार

सारांश
काव्यतत्त्वों की दृष्टि से वाल्मीकि रामायण अद्वितीय महाकाव्य है। अतएव विद्वानों ने इसे संस्कृत काव्यों की परिभाषा का आधार मानकर कतिपय लक्षणग्रन्थों का निर्माण किया है। महर्षि वाल्मीकि ने ऐसे समय में ग्रन्थ–रचना की जब उनके सम्मुख ऐसी कोई रचना नहीं थी, जो उनका पथ–प्रदर्शक कर सके। पुनरपि उन्होंने अपनी इस मौलिक कृति में प्रकृति–चित्रण, संवाद–संयोजन, विषय प्रतिपादन के साथ–साथ रस, अलंकारादि अन्यान्य काव्यीय तत्त्वों का यथा स्थान वर्णन करके परवर्ती आचार्यों का मार्ग प्रशस्त किया है। काव्य का परमार्थतः प्रयोजन रसास्वादमूलक आनन्दातिशय माना गया है। वाल्मीकि ने भी करुण रस रूपी आनन्द से प्रेरित होकर ग्रन्थ रचना की। यद्यपि आलोचक इस ग्रन्थ–रत्न में करुण रस के प्राधान्य को स्वीकारते हैं। लेकिन रस तत्त्व के सन्दर्भ में वाल्मीकि रामायण में वीरादि रसों के साथ प्रधानतः करुण रस ही आदि से लेकर अन्त तक सर्वत्र विद्यमान है। प्रस्तुत शोध पत्र को वाल्मीकि रामायण में उपलब्ध सभी रसों का अन्वेषण कर सहृदयों के सम्मुख प्रस्तुत किया गया है।

कूट शब्द– चित्तद्रुति, विप्रलम्भ, शिवधनुर्भङ्ग, अभिव्यक्ति, औचित्य, वक्रोक्ति, वस्तुध्वनि, अलंकारध्वनि

प्रस्तावना
संस्कृत जगत में वाल्मीकि कृत रामायण आदि काव्य और महर्षि वाल्मीकि आदिकवि के रूप में विख्यात है। आदिकाव्य रामायण रामचरित पर आधारित, परवर्ती काव्यकारों और नाटककारों के काव्यों का उपजीव्य ग्रन्थ ही नहीं अपितु भरतीयों का आद्यात्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तत्त्व एवं आचार–विचार, मैत्री भवना, आदर्श और उदारता का प्रतिनिधि ग्रन्थ है। इन सबके चिरस्थायी रूप के दर्शन वाल्मीकि रामायण मे ही मिलते हैं। रामायण कथा भारतीय जनमानस में इतना फुली–मिली है कि इससे अलग भारतीय की अस्तित्त्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है–

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले ।
तावद् रामायण कथा लोकेषु प्रचरिष्यति ।। [1]

आदिकवि वाल्मीकि–रामायण को करुण रस का प्रथम काव्य स्वीकृत करने में प्रमुख कारण यह है कि इस महाकाव्य की उत्त्पति का प्रेरणास्रोत व्याध के बाण से विधे हुए क्रो४च के लिए बिलखती क्रौ४ची का करुण निनाद ऋषि ने सुना, तो उनके मुख से सहसा शोक श्लोक रूप में परिणत हो गया–

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः ।
यत्क्रौ४चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।। [2]

भारतीय इतिहास में पूर्व काल से काव्य को आनन्द प्राप्ति का प्रमुख स्रोत के रूप में माना गया है। काव्य के आनन्द को ब्रह्मानन्दसहोदर कि संज्ञा से अंकित किया गया है–

सत्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्दचिन्मयः।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मानन्दसहोदरः ।। [3]

रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि और औचित्य ये षट् सम्प्रदाय काव्यलोचन के सूक्ष्म एवं महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त हैं। रस सिद्धान्त मानवीय भाववैभव एवं सार्वभौम, भावचेतना की अभिव्याक्ति है, जिसके माध्यम से कवि अपनी रागमयी–चेतना को विश्वजनीन एवं जीवंत बनाता है।

रस सिद्धान्त के आदि प्रवर्तक भरतमुनि हैं। उनके नाट्यशास्त्र में रस के विषय में कहा गया है–विभावानुभावव्यचारिसंयोगाद् रसनिष्पतिः। [4] रस शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है –1. पदार्थों का रस–अल्म, कटु, तिक्त आदि 2. आयुर्वेद का रस, 3. साहित्य का रस, 4. मोक्ष या भक्ति का रस। उपनिषदों में रस शब्द ईश्वर या ब्रह्म के अर्थ मे माना गया है–रसो वै सः। रसं ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति । [5]

आचार्य आनन्दवर्धन द्वारा संवेद्यमानता की रस प्रक्रिया में वस्तुध्वनि, अलंकारध्वनि, रसध्वनि तीनों सम्मिलित हैं। किन्तु वस्तुध्वनि और अलंकारध्वनि में वौद्धिक व्यायाम की अपेक्षा रहती है जो सभी के सामर्थ्य में नहीं जबकि रसभावादि ध्वनि में चित्तद्रुति का प्राधान्य होने से भावात्मक सौन्दर्य का साम्राज्य रहा करता है। विभावादि के श्रवण और पठन मात्र से सहृदय का मृन संवेदनशील हो जाता है और उनमें शीघ्रता से तन्मयीभवन की शक्ति आ जाती है –

योऽर्थो छदयसंवादी तस्य भावो रसोद्भवः ।
शरीरं व्याप्यते तेन शुष्ककाष्ठमिवाग्निना ।। [6]

रस के अन्तर्गत न केवल वृंगार, करुण और वीर आदि रसों का ही समावेश है, अपितु रस शब्द से भाव, रसाभास, भावाभास, भावोदय, भावसन्धि, भावशक्ति, भावशबलता का भी ग्रहण होता है। [7] रसों की संख्या मे आचार्य मतैक्य नहीं हैं। भरत ने जहां आठ रस स्वीकार किये हैं। [8] वहीं मम्मट द्वारा काव्यप्रकाश में –निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः [9] कहकर नवम शान्त रस की भी स्वीकृति की गई है। बाद में आचार्यों ने वात्सल्य, भक्ति आदि रस भी स्वीकार किये और इनकी संख्या मे वृद्धि होती गई। जहां एक ओर संख्या मे वृद्धि होती गई, वहां कुछ आचार्यों ने उनके संकोच की ओर भी ध्यान दिया–

रसोऽभिमानोऽहंकार वृंगार इति गीयते।
योऽर्थस्तस्यान्वयात् काव्य कमनीयत्वमश्नुते ।।
विशिष्टादृष्टजन्मायं जन्मिनामन्तरात्मसु ।
आत्मा सम्यग्गुणोद्भूतेरेको हेतुः प्रकाशयते ।। [10]

वाल्मीकि–रामायण में महर्षि वाल्मीकि ने रसों की संख्या पर ध्यान नहीं दिया है उनका रामायण की कथा लिखना प्रमुख उहेश्य था। लेकिन परवर्ती काव्याचार्यों ने रामायण को आधार वनाकर रसों की संख्या को निर्धारित करने का प्रयास किया है।

करुण रस–

काव्य आचार्यों ने प्रिय वस्तु के लुप्त होने और अप्रिय की प्राप्ति से मन में उत्पन्न उत्कण्ठा को शोक नाम से संज्ञापित करके इसे करुण रस का स्थायी भाव माना है–इष्टनाशदिभिश्चेतो वैक्लव्यं शोकशब्दभाक्। [11] रामायण मे यथास्थान, यथावसर सभी रसों की आभिव्याक्ति प्राप्ति हुई है, परन्तु शोक स्थायी भाव करुण को समुचित प्रधानता मिली है। ध्वान्यालोक के चतुर्थ उद्योत में आनन्दवर्धन करुण रस के महत्त्व को कहते हैं–

''रामायणं हि करुणो रसः स्वयमादिकविना सूत्रितः ''शोक श्लोकत्वमागतः'' इत्येवं वादिना, निव्युढश्च स एव सीतात्यन्तवियोपर्यन्तमेव स्वप्रबन्धानुपरचयता''।।

आदिकवि उस शोक को आभिव्याक्ति देने में मर्मस्पर्शी प्रसंग प्रस्तुत करते हैं। जहां राम जी के वन प्रस्थान करते समय सारा नगर अत्यन्त पीड़ित हो गया। उस करुणावसर पर न केवल रघुवंशी परिवार अपितु समस्त अयोध्या नगरी शोकाग्नि में जल रही थी। [12] भ्राता लक्ष्मण को चोट खाये सर्प के समान तड़पता देखकर राम के चित्त में उद्दिपित शोक के रूप में जो अभिव्यक्ति हुई है, [13] वे शब्द निम्न रूप से भारतीय जनमानस की अमर निधि वन गये हैं–

देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बान्धवाः ।
तं तु देशं न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः।। [14]

रामाण के अनेक स्थलों मे भी करुण रस की अभिव्यक्ति के दर्शन होते हैं, जब रावण द्वारा अपहरण के समय सीता असहाय होकर सहायतार्थ क्रन्दन करती है। कारुण्य से करुण रस की प्रथम झलक वाल्मीकि रामायण में ही होती है।[15] इसी प्रकार अनेक शोकमय विलाप रामायण में उपस्थित होते हैं।

वृंगार रस–

काव्य में रस ही प्राण तत्व होता है। जीवन में रति एवं प्रेमनामक भाव की बहुलता का प्रभाव देखा जाता है। महाकाव्य में समस्त जीवन का चित्रण होता है और वृंगार का विशेष महत्त्व होना उसमें स्वभाविक है। वृंगार रस संयोग अथवा वियोग के भेद से दो प्रकार का है। वाल्मीकि रामायण में दोनों प्रकार के भेदों के दर्शन होते हैं। राम और सीता के आनुराग के प्रथम दर्शन उनके विवाहोत्तर कालीन अयोध्या निवास के समय मिलता है। इस स्थल में पाठक को वृंगार रस के जिस अलौकिक और सात्त्विक रूप की अनुभूति होती है, वह अन्यत्र मिलनी दुर्लभ है। राम और सीता विषयक रति अत्याद्धिक मार्मिक परिस्फुट हुई है जब राम और सीता आशोक वाटिका में गमनार्थ उद्योत होते हैं। [16] वाल्मीकि रामायण में संयोग के साथ वृंगार वियोग की छटायें सछदय को अत्यन्त मोहित करने वाली हैं। विप्रलम्भ का भी रामायण में अनेकशः रमणीय रूप मिलता है।

वाल्मीकि ने द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि काण्डों में वियोग के ऐसे दर्शन करवाये हैं जो मर्मस्पर्शी और छदय द्रावक हैं। सीता हरणोपरान्त राम का विलाप [17] और सीता का आशोक वटिका में उदासीनता [18] वियोग वृंगार रस के उत्तम उदाहरण हैं। नायक और नायिका की मृत्यु का वास्तविक वर्णन नहीं किया जाता, क्योंकि उससे काव्य में रसविच्छेद हो जाता है, उसका केवल प्रयत्नमात्र उपनिबद्ध किया जाता है। मेघदूत में कालिदास विरहाद्विग्न नायिका के वर्णन में वाल्मीकि के वर्णन से प्रेरित से जान पड़ते है।

हास्य रस–

वाल्मीकि रामायण में प्रायः हास्य रस के सभी भेदों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है, जैसे कि एम. वी. आयंगर का उद्बोद्ध है कि रामायण में मौलिक और स्वस्थ हास्य के स्थल हैं। [19]

स्मित– छः प्रकार के हास्यों में स्मित प्रथम नामक हास्य के नाम से जाना जाता है। [20] राम के विचारों से भी यह अभिव्यक्त हुआ है। रावण के सेनानायक प्रहस्त के विशालकाय शरीर के दर्शन से विस्मित हुये राम के चित्रण में हास्य का यही स्मित रूप मिलता है। [21]

हसित– हास्य रस का एक और मर्मस्पर्शी और आनन्द दायक स्थल है वह है, जहां लंका में हनुमान् मन्दोदरी को सीता समझकर नृत्य करता है। [22] आदिकवि द्वारा रामायण कथा में हास्य रस के कुछ ऐसे स्थल भी प्राप्त होते हैं जहां पर किसी मुर्खता पूर्ण कार्यों के माध्यम से हास्य रस की अभिव्य४जना होती है। जहां वाली और अर्जुन के मन्त्रियों के संवाद में रावण के प्रति किया गया उपहास दृष्टिगोचर होता है। इस प्रकार हास्य रस के अनेक रूपों के द्वारा आनन्द प्राप्ति की जा सकती है।

वीर रस–

भारत वर्ष के एक सच्चे क्षत्रिय का उज्ज्वलतम रूप हमें राम में पूर्ण रूप से मिलता है। उनकी यह दृढ़ भावना है कि क्षत्रियों का धनुष धारण करने का प्रमुख उद्देश्य यही है कि किसी असहाय और पीड़ित व्याक्ति का आर्तनाद सुनाई पड़े। [23] राम और खर–दूषण के बीच युद्ध में हमें वीर रस का उत्कृष्ट रूप मिलता है। रामायण का छठा काण्ड तो वीर रस से ओत प्रोत हुआ प्राप्त मिलता है। यहां

पर न केवल राम पक्ष की अभीव्यक्ति हुई बल्कि रावण, मेघनाद, कुम्भकर्ण आदि विरुद्ध पक्ष के युद्ध वीरों में भी वीर रस अव्यक्त हुआ है। वाल्मीकि रामायण में न केवल युद्ध वीर अपितु धर्मवीर के भी सुन्दर पद्य मिलते हैं। राजा दशरथ धर्म और सत्य के पालन में सदैव कर्त्तव्य निष्ठ हैं। [24] दयावीर के उदाहरण में हम उस स्थल को ले सकते हैं जहां पर जटायु सीता को असहाय की स्थिति में दयाभाव से प्रेरित होकर बलशाली रावण से लडता है–

स राक्षसरथे पश्यन् जानकीं वाष्पलोचनाम् ।
अचिन्तयित्वा बाणांस्तान् राक्षसं समभिद्रवत् ।। [25]

अतः इस आदि काव्य में वीर रस की अनेक सामग्री के साथ अत्यन्त भव्य और मर्मस्पर्शी रूप के द्वारा सछदयजन भरपूर रसास्वादन करते हैं।

रौद्र रस–

रौद्र रस एवं वीर रस एक–से प्रतीत होते हैं, लकिन सूक्ष्मता से निरीक्षण करने पर उनका वास्तविक भेद दिखलाई पड़ता है, क्योंकि वीर का स्थायी भाव उत्साह है जबकि रौद्र का क्रोध। वाल्मीकि–रामायण में रौद्र का स्थान यद्यपि गौण है, तथापि कुछ स्थलों पर इसका सुन्दर दर्शन हुआ है। रामायण रौद्र रस की अनुभूति सछदसजन को उस समय होती है, जब सीतान्वेषण में राम सुग्रीव की उपेक्षा के कारण उससे क्रुद्ध होते हैं [26] और अपना क्रौद्र पूर्ण सन्देश देकर लक्ष्मण को उसके पास भेजते हैं। लक्ष्मण द्वारा सुग्रीव के प्रति कथन है–'न त्वां रामो विजानीते सर्प मडुकराविणम्' इस वाक्य में रौद्र रस का उग्ररूप साकार हो उठा है, जिसमे अतीव सुन्दर व्याग्यार्थ निहित है, जो सहृदय के लिए समझना अत्यन्त सुगम है। इस रस के अन्य उदाहरण शिवधनुर्भंग किये जाने पर परशुराम के क्रोध और कैकेयी पर भरत के कोप में प्राप्त मिलते हैं। रामायण में राम जहां सदैव प्रसन्नता, कोमलता और मधुरता से खिले हुए मिलते हैं, वहीं सीता हरणोपरान्त लक्ष्मण से कहते हैं कि अगर देवेश्वर मेरी प्राण प्रिया को मुझको लाकर नहीं देंगे तो मैं अपने बाण की मार से तीनों लोकों को मर्यादा से पतित कर दूंगा। [27] ऐसा कहने पर उनके नेत्र लाल हो गये, होंठ फड़कने लगे। [28]

भयानक रस–

सछदयजन के चित्त में संकोचन उत्पन्न करके आस्वादन में उत्कर्षत्व प्रदान करने में भयानक रस का भी रसों में अपना विशिष्ट स्थान है। रामायण में भयानक रस की अत्यन्त सुन्दर पराकाष्ठा की अनुभूति उस समय होती है, जब सीतान्वेषण के समय सुग्रीव राम और लक्ष्मण के दर्शन करके भयभीत होते हैं। [29] इसके अतिरिक्त कवि ने वालि वध के समय त्रस्त वानरों के वर्णन में भयानक रस का सौष्ठव दिखलाया है–

ये त्वंगदपरीवारा वानरा हि महाबलाः।
ते सकार्मुकमालोक्य रामं त्रस्ताः प्रदुद्रुवुः।। [30]

रामायण के युद्ध काण्ड में महेन्द्र तुल्य पराक्रमी रावण के परास्त होन पर बलशाली व भयानक कुम्भकर्ण को जगाया जाना, जो उस समय महानिद्रा मे लिप्त हुआ, विखरे हुए पर्वत के समान विकृतावास्था में सोकर खर्राटे ले रहा था, वह राक्षस भयानक बलविक्रम से सम्पन्न था।[31] उसे देखकर वानरों का अत्यधिक भयभीत होना आदि का वर्णन भय से परिपूर्ण दर्शाया गया है। युद्ध के क्षेत्र में मेघनाद एवं कुम्भकर्ण के द्वारा वानरों में भय के दर्शन से सहृदयजन के मन में भयानक रस की झलक देखने को मिलती है। [31] अन्य स्थलों पर भी इस रस सम्वन्धी उदाहरण के द्वारा सछदयजन को आनन्द प्राप्त होता है।

बीभत्स रस–

वाल्मीकि–रामायण में जुगुप्सा नामक स्थायी भाव की परिपक्व अवस्था को बीभत्स रस की संज्ञा से संज्ञापित किया गया है। आचार्यों ने इसे तीन कोटियों में रखा है– क्षोभण, उद्वेगकृत और विरक्तिकृतबीभत्स। [32]

क्षोभण बीभत्स के सम्बन्ध में कहा गया है कि जहां रुधिर, अस्थि, आन्त्र, मज्जादि विभावों से जो बीभत्स का प्रादुर्भाव होता है उसे क्षोभण नाम की संज्ञा दी गई है।[33] क्षोभण को हम युद्ध वर्णन में देख सकते हैं, जहां रक्त की नदियां बह उठती हैं। कवि ने पंचम काण्ड में राक्षसराज रावण के वर्णन में इस रस की भव्य झलक प्रस्तुत की है। [34] साहित्याचार्यों ने विष्ठा और कृमियों को देखने से प्राप्त बीभत्स को उद्वेगी नाम से अंकित किया है। [35] राम चित्रकूट पर्वत को त्याग देने का निर्णय करते है, क्योंकि भरत का अयोध्या मे लोटने के उपरान्त उस स्थल में भरत के सेना के अश्व और हाथियों ने मल से दूषित कर दिया था।

अद्भुत रस–

विस्मय नामक चित्त का विस्तार चमत्कार कहलाता है। रस में यही चमत्कार प्राणरूप होता है –

चमत्कारः चित्तविस्ताररूपो विस्मयापरपर्यायः। [36]

सब रसों में चमत्कार, साररूप से प्रतीत होता है। और यही विस्मय के साररूप स्थायी होने से सब जगह अद्भुत ही जान पडता है।[37] वाल्मीकि–रामायण के उदाहरणों से प्रतीत होता है कि अनेक स्थलों पर अलौकिक वस्तुओं, प्राणियों और कार्यधक्रियाओं की अभिव्यक्ति के द्वारा अद्भुत रस के दर्शन होते हैं। अद्भुत के दर्शन मायामृग के उस समस्त वर्णन में प्राप्त होते हैं, जिस पर सीता और राम का अत्याधिक आश्चर्यचकित होना स्वभाविक है–

अदृष्टपूर्वं दृष्टवा तं नानारत्नमयं मृगम् ।
विस्मयं परमं सीता जगाम जनकात्मजा।। [38]

भरद्वाज द्वारा भरत की सेना का आतिथ्य करना अद्भुत की श्रेणी में आता है स्वयं वाल्मीकि द्वारा यह ध्वनित है। वे यहां पर अद्भुत रस की सुन्दर झलक प्रस्तुत कर रहे हैं। [39] वाल्मीकि–रामायण में अनेक स्थलों पर अद्भुत की घटनों की अभिव्यक्ति के द्वारा सछदयजन अत्याधिक आनन्दित होता है।

शान्त रस–

शम और निर्वेद [40] स्थायी शान्त रस का वर्णन वाल्मीकि–रामायण मे यद्यपि अल्पमात्रा में हुआ है फिर भी विविध स्थानों पर सछदय के लिए आनन्द का कारण वना हुआ है। यहां पर प्रकृतिविषयक शान्त रस और विरिक्तविषयक शान्त रस नामक दो सत्ताओं का वर्णन प्राप्त मिलता है। प्रकृतिविषयक शान्त रस की सृष्टि के दर्शन उस समय मिलते हैं जब भरद्वाज चित्रकूट की शुद्धता, पवित्रता और निर्मलता का व्याख्यान करते हुए कहत हैं कि चित्रकूट के दर्शन करके प्राणी के छदय में सात्विक भाव उत्पन्न होता है और पाप कर्मों से उसका मन विरक्त हो जाता है क्योंकि अनेक ऋषियों ने अपने जप से अनेक वर्षों तक इस स्थान पर निवास करके स्वर्ग प्राप्त किया है। [41] भरत के द्वारा भी तपस्वी जन के इस स्थान को स्वर्ग प्राप्ति का उत्तम पथ कहा गया है–

अतिमात्रमयं देशो मनोज्ञः प्रतिभाति मे ।
तापसानां निवासोऽयं व्यक्तं स्वर्गपथोऽनघ।। [42]

विरक्तिविषयक शान्त रस के दर्शन चित्रकूट पर भरत मिलाप के समय भरत और राम के वार्तालाप में दृष्टिगोचर होता है।

वत्सल रस–

साहित्यिक रसों की संख्या में आचार्य मतैक्य नहीं है तथा वत्सल को अलग रस के रूप में कुछ काव्यशास्त्री नहीं मानते हैं, लेकिन वैदिक साहित्य में शिशुओं के प्रति माता की ममता व्यक्त करना [43], लौकिक साहित्य में अभिज्ञानशाकुन्तल में शकुन्तला की विदाई [44], शिशु रघु के लिए राजा दिलीप का स्नेह व्यक्त करना [45] आदि इसके सुन्दर प्रसंग प्राप्त मिलते हैं, जिनके आधार पर यह भासित होता है कि पूर्व काल से ही साहित्य में वत्सलता की रमणीयता से सुन्दर भव्य झांकी प्रस्तुत होती आई है। वाल्मीकि–रामायण मे पितृवत्सल राम के प्रति दशरथ का स्नेह इस रस की अनुभूति करवाता है–

तिष्ठेल्लोको विना सूर्यं सस्यं वा सलिलं विना ।
न तु रामं विना देहे तिष्ठेत्तु मम जीवितम्।। [46]

रस या भाव के विषय में जगन्नाथ का यह व्याख्यान भी हमारे लिए पथ–प्रदर्शक हो सकता है कि रस की प्रमाणिका में सछदय का अनुभव ही प्रमाण है।[47] वाल्मीकि–रामायण में वात्सल्य भाव के विविध उदाहरणों में वत्सल रस की अभिव्यक्ति के दर्शन होते हैं।

सन्दर्भ

1. वा. रा. 2. 36. 7
2. वा. रा. 1. 2. 14
3. सा. द. 3. 2
4. ना. शा. काव्यामालागुच्छक पृ. 93
5. तै. उ. ब्रह्मानन्दवल्ली
6. ना. शा. 7. 7
7. रसभावौ तदाभासौ भावस्य प्रशमोदयौ ।
   सन्धिः शबलता चेति सर्वेऽपि रसनाद् रसाः ।। सा. द. 3. 259
8. वृंगारहास्यकरुणा रौद्रवीरव्यानकाः ।
   वीभत्साद्भुतसंज्ञौ चैत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः ।। ना. शा. 6. 16
9. का. प्र. 4. 47
10. वृंगारप्रकाश,काव्यमाला, 5. 1/2, पृ. 474
11. सा. द. 3. 177
12. वा. रा. 2. 40. 35
13. वा. रा. 6. 89. 2
14. वा. रा. 6. 101. 15
15. वा. रा. 1. 2. 14
16. रामस्तु सीतया सार्धं विजहार बहूनृतून्।
    मनस्वी तद्गतस्तस्या नित्यं छदि समर्पितः ।। वा. रा. 1. 76. 14
17. वा. रा. 7. 41. 1
18. प्रस्थितं दण्डकारण्यं या मामनुजगाम ह ।
    क्व सा लक्ष्मण वैदेही यां हित्वा त्वमिहागतः ।। वा. रा. 3. 56. 2
19. ततो मलिनसंवितां राक्षसीभि समावृताम्।
    उपवासकृशां दीनां निःश्वासन्तीं पुनः पुनः।। वा. रा. 5. 13. 18
20. स्मितमथ हसितं विहसितमुपहसितं चापहसितमतिहसितम्।
    द्वौ द्वौ भेदौ स्यातानुत्तमध्यमाधमप्रकृतौ।। ना. शा. 6. 52
21. ततः प्रहस्त निर्यान्तं दृष्ट्वा भीमपराक्रमम्।
    उवाच सस्मितं रामो विभीषणमरिंदमः।। वा. रा. 6. 58. 1
22. वा. रा. 5. 8. 49, 50
23. किं तु वक्ष्याम्यहं देवि त्वयैवोक्तमिदं वचः।
    क्षत्रियैर्धार्यते चापो नार्तशब्दो भवेदिति।। वा. रा. 3. 9. 3
24. सत्यसन्धो महातेजा धर्मज्ञः सुसाहितः।
    वरं मम ददात्येष तन्मे श्रृण्वन्तु देवताः।। वा. रा. 2. 10. 24
25. वा. रा. 3. 49. 10
26. वा. रा. 4. 29. 41–42
27. वा. रा. 3. 64. 67–68
28. वा. रा. 3. 64. 72
29. तौ तू दृष्ट्वा महात्मनौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ।
    वरायुधधरौ वीरौ सुग्रीवः शंकितोऽभवत्।। वा. रा. 4. 2. 1
30. वा. रा. 4. 19. 5
31. वा. रा. 6. 60. 28
32. तमवध्यं मघवता यमेन वरुणेन च।
    प्रेक्ष्य भीमाक्षमायान्तं वानरा विप्रदुद्रुवुः।। वा. रा. 6. 54. 2
33. द.रू. 4. 73
34. रुधिरान्त्रादिदर्शनाद्यो बीभत्सः क्षोभणत्वाच्छुद्धः। अ. भा .पृ.
35. मृगाणां महिषाणं च वराहाणां च भागशः।
    तत्र न्यास्तानि मांसानि पानभूमौ ददर्श ह।। वा. रा. 5. 9. 11
36. विष्ठाकृमिभिरुद्वेगी।। ना. शा 6. 81
37. सा. द. 3. 3 की वृत्ति
38. रसे सारश्चमत्कारः सर्वत्राप्यनुभूयते।
    तच्चमत्कारसारत्वे सर्वत्राप्यद्भुतो रसः। सा. द. 3. 3 की वृत्ति
39. वा. रा. 3. 40. 32
40. वा. रा. 2. 85. 74
41. निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः। का .प्र. 4 .47
42. वा. रा. 2. 48. 27/28
43. वा. रा. 2. 93. 18
44. ऋग्. 2. 35. 13
45. अ. शा. चतुर्थ अंक
46. रघु. 3. 25
47. व .रा. 2. 10. 39
48. र. ग. पृ. 202
49. अभिज्ञानशान्कुतल, कालिदास, सुबोधचन्द्र, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1970
50. अभिनवभारती अभिनवगुप्त, ओयिण्टल इंस्टीच्यूट, बडोदा, 1956
51. उत्तररामचरित, भवभूति, रमाकान्त त्रिपाठी, चौखम्भा सूरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1995
52. उपनिषदों में काव्यतत्त्व, डॉ.कृष्णकुमार धवन, विश्वेश्वरानन्द वैदिकशोध संस्थान होशियारपुर, 1976
53. उपनिषद संग्रह, नन्दलाल दशोरा, दयाकृष्ण शर्मा, रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार, 2012
54. ऋग्वेद(शाकलसंहिता) श्री पाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी, 1983
55. काव्यप्रकाश, मम्मट, डॉ. श्री निवास शास्त्री, सुभाष बाजार, मेरठ, 1960
56. दशरूपक, धनंजय, डॉ. श्री निवास शास्त्री, सुभाष बाजार, मेरठ, 1969
57. ध्वन्यालोक, आनन्दवर्धन, जगन्नाथ पाठक, चौ.सं.सं, वाराणसी, 1982
58. ध्वनिसिद्धान्त की दृष्टि से वाल्मीकि–रामायण का अध्ययन, डॉ. जयनारायणशर्मा, ब्राह्मी–साहित्यसदन, होशियारपुर, 1991
59. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरत, ओयिण्टल इंस्टीच्यूट, बडोदा, 1956
60. रघुवंश, कालिदास, छन्नूलाल ज्ञानचन्द पाठक, संस्कृत पुस्तकालय, वाराणसी, 1959
61. रसगंगाधर, पण्डितराज जगन्नथान, चौ.वि.भ, 1955
62. वाल्मीकि–रामायण, वाल्मीकि, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2070
63. वाल्मीकि–रामायण में ऋतु वर्णन, सीमा प्रियदर्शिनी, संस्कृत विभाग, श्रीवार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़, 2011
64. साहित्यदर्पण, विश्वनाथ, शालिग्रामशास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1977